ग्रहों की स्थिति से जानिए अपना जीवन

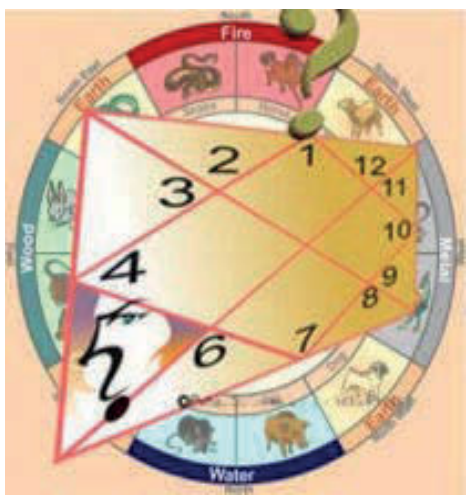

राशियों में परिभ्रमण करते समय ग्रह अपनी मित्र व शत्रु तथा उच्च व नीच राशियों में प्रवेश करते हैं। इसके साथ ही कई बार जन्म कुंडली में विभिन्न भावों (घर) से संचरित होते हुए अन्य ग्रहों से युति संबंध बनाते हैं।

ग्रहों की उक्त स्थिति में गतिशीलता जीवन को अच्छे व बुरे दोनों रूप में प्रभावित करती है। राशि में सूर्य के साथ अन्य ग्रह आने पर वे अस्तगत (अस्त होना) हो जाते हैं, इस कारण उस ग्रह का प्रभाव समाप्त हो जाता है। सूर्य के समीप चंद्र 2 डिग्री, मंगल 17, बुध 13, गुरु 11, शुक्र 9 व शनि 15 डिग्री का होने पर अस्त हो प्रभावहीन हो जाते हैं।

इसमें भी खास यह है कि जन्मकुंडली के माने गए अच्छे भाव यानी पंचम, सप्तम, नवम, दशम व एकादश भावों में अस्तगत ग्रह अपना मूल प्रभाव नहीं देता है। इसलिए जन्मकुंडली में ज्योतिष विचार करते समय ग्रहों की उपरोक्त स्थितियों का गंभीरता से विचार कर ही फलादेश करना चाहिए। साथ ही नवमांश, दशमांश व अन्य कुंडलियों में स्थित ग्रहों का भी अवलोकन किया जाना चाहिए।

ब्रह्मांड प्रतिनिधित्व करते 12 भाव : जन्मकुंडली के बारह भावों को ब्रह्मांड का प्रतीक माना गया है, जो मनुष्य के जीवन के हर पक्ष को प्रभावित करते हैं। मनुष्य के जीवन में घटने वाली घटनाओं का आकलन इन बारह भावों में स्थित ग्रहों की मौजूदगी को आधार बनाकर किया जाता है।

कुंडली के प्रथम भाव को तन या शरीर, द्वितीय भाव को धन व वाणी, तृतीय भाव को पराक्रम, चतुर्थ भाव को माता व सुख, पंचम भाव शिक्षा व संतान, छठवां भाव रोग व शत्रु, सातवां भाव पति-पत्नी व दाम्पत्य जीवन, आठवां भाव आयु, नवम भाव धर्म व यात्रा, दशम भाव राज्य व पिता, ग्यारहवां भाव आय व लाभ तथा बारहवां भाव व्यय तथा हानि का है।

इन्हीं बारह भावों में स्थित ग्रहों व उनकी गोचरीय गति को ध्यान में रखकर ही जीवन के सभी पहलुओं पर ग्रहों व भावों के गुण तथा धर्म अनुसार विचार कर फलादेश तय किया जाता है।

ग्रहों की उच्च व नीच राशियां : ज्योतिषीय आकलन में जन्मकुंडली में स्थित ग्रहों की उच्च व नीच राशियों का भी बड़ा महत्व है। हर ग्रह अलग-अलग डिग्री पर उच्च व नीच राशि का फल देता है।

सूर्य अपनी 10 डिग्री तक मेष राशि में उच्च का व तुला राशि में नीच का माना गया है। इसी प्रकार चंद्रमा 3 डिग्री तक वृषभ राशि में उच्च व वृश्चिक में नीच, मंगल 28 डिग्री तक मकर राशि में उच्च व कर्क राशि में नीच, बुध 15 डिग्री तक कन्या राशि में उच्च व मीन राशि में नीच, गुरु 5 डिग्री तक कर्क में उच्च व मकर में नीच, शुक्र 27 डिग्री तक मीन में उच्च व कन्या में नीच तथा शनि 20 डिग्री तक तुला में उच्च व मेष में नीच राशि का माना गया है।

इनकी बलवान व निर्बल स्थिति का विवेचन राशि में उच्च या नीच की स्थिति अनुसार किया जाता है।

मीरा और मोहन

किसी प्रेम को, आस्था को या समर्पण को जानना है, तो मीरा को जानना होगा। मीरा को जानना मोहन को पाने के बराबर है। कारण इसका यह भी है कि एक स्तर पर आकर उनका आपस का भेद ही खत्म हो जाता है...

कृष्ण को जानना हो, तो मीरा को सेतु बनाओ, क्योंकि मीरा के अलावा दूसरा कोई सेतु नहीं जो कृष्ण की थाह पा सके। भक्त हर युग में हुए, मगर मीरा जैसा भक्त किसी युग में दूसरा नहीं हुआ। मीरा की कृष्ण भक्ति के आगे दुनिया की हर भक्ति फीकी दिखाई पड़ती है। मीरा कृष्ण जी की मूर्ति के सामने खड़ी होकर कहती हैं- 'मैं तो सिर्फ इस योग्य हूं कि तुम्हारे गीत गा सकूं। इसके अलावा मुझमें दूसरा कोई गुण नहीं है।

'जहां बैठाने तित ही बैठूं, बेचे तो बिक जाऊं।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, बार-बार बलि जाऊं।'

अर्थात- अब तो मेरा जीवन उसी की आज्ञा के जैसा चलता है। जहां बिठा देता है, वहीं बैठ जाती हूं। उठने को कहता है, तो उठ जाती हूं। मेरे तो प्रभु कृष्ण कन्हैया हैं, जिन पर जीवन बलिहारी है।

परमात्मा के प्रति मीरा की दीवानगी इस हद तक थी कि उन्हें दुनिया में कृष्ण के अलावा कुछ दिखाई ही नहीं देता था। वह कहती हैं, संतों के संग बैठ बैठ कर वह जो लोक लाज का व्यर्थ आडम्बर था, बोझ था वह सारा मैंने उतार दिया है। संत के संग बैठ कर भी अगर लोग लाज न खोई, तो संत से क्या सीखा?

कौन थीं मीरा?

मीरा कृष्ण की दीवानी थी, ऐसा सारा संसार जानता है। मगर उनकी पृष्ठभूमि को जानना भी बहुत जरूरी है। मीरा का जन्म राठौर परिवार के रत्न सिंह और वीर कुंवरी के घर 1512 में मेड़ता में हुआ था। मीरा के दादा का नाम राव द्दा जी था, जो अत्यंत धनाड्य थे। मीरा की माता वीर कुंवरी झाला राजपूत सुल्तान सिंह की बेटी थी। रत्न सिंह ने कुड़की गांव को अपना केंद्र बनाया था। मीरा ने गुरु गजाधर से शिक्षा ग्रहण की। उन्हें अपनी आजीविका के लिए सात हजार बीघा जमीन दे रखी थी और उन्हें व्यास की पद्वी से विभूषित किया था। मीरा की एक बाल सखी थी ललिता, जो वास्तव से उसकी दासी थी।

एक बार मीरा महल के ऊपर खड़ी थी। नीचे से एक बारात जा रही थी। बाल सुलभ मीरा ने मां से पूछा कि यह क्या हो रहा है? मां ने बताया कि बारात जा रही है। मीरा के यह पूछने पर कि बारात क्या होती है? मां ने कहा कि वर पक्ष के लोग कन्या के घर पर उसे विवाह कर लातें है और विवाह में वर का किसी कन्या के साथ विवाह होता है। उसने मां से पूछा कि

मेरा वर कौन होगा? इतने में कुल पुरोहित श्रीकृष्ण की एक मूर्ति लेकर आए और मां ने मजाक में कह दिया कि यह है तेरा वर। और मीरा ने श्रीकृष्ण को अपना वर मान लिया।

जब मीरा की शादी हुई

मीरा जब शादी के योग्य हुईं, तो माता-पिता ने उनका रिश्ता राजकुंवर भोजराज से कर दिया। भोजराज चितौड़ नरेश राणा सांगा के पुत्र थे। मीरा ने इसे अपनी दूसरी शादी करार दिया। राजघराने की बहू बनने के बाद भी वह हर वक्त श्रीकृष्ण की भक्ति में लीन रहने लगीं। मीरा की एक देवरानी थी अजब कुंवरी, जो बाल विधवा थी। उसने मीरा की भावनाओं को समझ लिया तथा उसे सखी जैसा प्यार देने लगी। दूसरी तरफ उसकी ननद ऊदो ने बड़ी कोशिश की कि मीरा कृष्ण भक्ति छोड़ दें, मगर असफल रहीं।

राजकुंवर भोजराज की असमयिक मृत्यु हो गई। प्रथा के अनुसार पति की मृत्यु पर पत्नी को सती हो जाना था, मगर मीरा ने सती होने से इंकार कर दिया। सभी लोग चाहते थे कि मीरा सती हो जाए, मगर भोजराज का छोटा भाई मीरा के पक्ष में खड़ा हो गया और वह सती होने से बच गईं।

जब मीरा पर अत्याचार हुए

उसी समय बाबर ने भारत पर आक्रमण कर दिया। राणा सांगा और बार में भीष्ण युद्ध हुआ, तो मीरा के पिता रत्न सिंह और भाई जलमल तथा अन्य रिश्तेदार राणा सांगा के साथ खड़े हो गए। मगर युद्ध में मारे गए, जिससे मीरा बहुत आहत हुईं। राणा सांगा भी मारा गया, तो चित्तौड़ की गद्दी पर राणा रत्न सिंह और उसके बाद विक्रम सिंह बैठे। विक्रम सिंह की बुरी नजर मीरा पर पड़ गई। उसने मीरा को प्राप्त करने का हर संभव प्रयास किया, मगर उसके इंकार करने पर वह मीरा से बदला लेने की सोचने लगा।

जन्माष्टमी के दिन राजा विक्रम सिंह ने मीरा को एक उपहार पेटिका भेजी, जिसमें काला भयंकर सांप था। मीरा ने पेटिका खोली, तो उस सांप को देखते ही पकड़ लिया। उसे कुछ नहीं हुआ। इतना ही नहीं, एक बार मीरा को धोखे से श्रीकृष्ण का चरणामृत कहकर विष भेजा गया। मीरा विष पीकर भी जिंदा रहीं। तब क्रोधित विक्रम सिंह ने मीरा पर तलवार से हमला किया, तो उसे एक साथ चार-चार मीरा नजर आने लगीं। आखिरकार मीरा अपने ताया के पास मेड़ता चली गईं, ताकि उसके अत्याचारों से बच सके। वह मथुरा वृंदावन भी गईं। और वहां के रणछोड़ जी के मंदिर में अपने बनाए भजन गाया करती थीं।

मीरा समुद्र की लहरों में समा गईं

उधर राणा विक्रम अभी भी मीरा के पीछे पड़ा था। उसने पुरोहितों को मीरा के पास भेजा कि राणा बदल गया है। उसने यह भी कहलवा दिया कि अगर वह न लौटीं, तो वह आमरण अनशन करेगा। मीरा ने समझ लिया कि अब प्रभु मिलन का समय आ गया है। वह समुद्र की लहरों की ओर बढ़ने लगीं और इस तरह 1573 में वह समुद्र की लहरों में समा गईं।

ध्यान : सफलता भी, शांति भी

सफलता के साथ मन के भीतर शांति मिलना मुश्किल होता है। आज के अधिकतर युवाओं के साथ यही समस्या है कि वे सफल तो हो रहे हैं लेकिन उस सफलता में कहीं शांति नहीं है। सफलता के साथ शांति का सबसे बेहतरीन मार्ग बौद्ध धर्म में बताया गया है। बौद्ध धर्म ने हर परेशानी का हल ध्यान में तलाशने का प्रयास किया है और इसमें वे काफी हद तक सफल भी हुए हैं।

बौद्ध धर्म ने अपना सारा ध्यान मेडिटेशन पर ही केंद्रीत किया है। मन को शांति तब मिलती है जब आप को किए गए काम में आनंद भी आ रहा हो। कई लोगों के साथ परेशानी यह भी है कि जो काम वे कर रहे हैं, उसे एक बोझ या केवल काम मान कर ही कर रहे हैं। बौद्ध धर्म ध्यान के जरिए पहले किसी भी काम में अपनेआप को डुबोने और फिर उसमें आनंद तलाशने को कहता है। जब काम में आनंद आने लगे तो सफलता अपनेआप मिल जाती है। इस सफलता में शांति भी होती है। बौद्ध धर्म कहता है कि हर व्यक्ति को अपनी दिनचर्या में थोड़ी देर मेडिटेशन भी करना चाहिए। अपनी दिनचर्या को कुछ ऐसे प्लान करें कि उसमें सुबह या शाम का थोड़ा समय ध्यान के लिए रहे।

ध्यान से मन एकाग्र होगा, शरीर शांत और मन केंद्रीत रहेगा। इससे हमें ऊर्जा तो मिलेगी ही, साथ हम जो भी काम कर रहे हैं, समें बेहतर परिणाम मिलेंगे। बौद्ध धर्मा का आधार ही ध्यान है। इसी में उनकी सफलता का मूल मंत्र और रहस्य छिपा हुआ है।

रत्न पहनने से पूर्व

शनि के अशुभ प्रभावों को कम करने के उपायों में रत्न धारण करना भी शामिल है। शनि का रत्न नीलम है।

ज्योतिषी शनि की महादशा, अंतर्दशा, प्रत्यंतर दशा, ढय्या, साढ़ेसाती एवं अशुभ गोचर भ्रमण की अवधि में इसके (शनि के) अशुभ प्रभाव को कम करने के लिए नीलम पहनने की सलाह देते हैं, लेकिन शनि की अशुभ स्थिति में नीलम पहनना उचित होगा या नहीं इसे जानना उपयोगी रहेगा। कमजोर ग्रह को बलवान बनाने के लिए तो उस ग्रह से संबंधित रत्न पहनने की ज्योतिर्विद सलाह देते हैं, लेकिन अशुभ या अनिष्टकारक ग्रह का रत्न धारण करने की सलाह नहीं देते।

वैज्ञानिक भी मानते हैं कि रत्न ब्रह्माण्ड या अंतरिक्ष में व्याप्त रश्मियों के श्रेष्ठतम सुचालक हैं। उनमें छलनी की तरह खराब किरणों को रोक कर अच्छी किरणें ही ग्रहण करने की क्षमता नीलम धारण करने से शनि ज्यादा बलवान होकर ज्यादा मात्रा में अशुभ फल देगा यह तर्कसंगत प्रतीत होता है। इस कारण शनि या अशुभ ग्रह को उसका रत्न धारण कर कभी भी बलवान नहीं बनाएं।

ऐसे अनिष्ट ग्रहों के अशुभ फलों से बचने के लिए उनसे संबंधित वस्तुओं का दान, पाठ पूजा, मंत्र जप आदि उपाय करना ज्यादा फलदायी रहेगा। कुछ विद्धानों की मान्यता है कि शनि मेष राशि में नीच के होकर निर्बल होता है।

इसलिए मेष राशि के स्वामी मंगल का रत्न मूंगा पहनने से शनि की अशुभता या बुरे फल से बचाव होता है, क्योंकि यह शनि की अशुभता कम करता है।

'सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी'

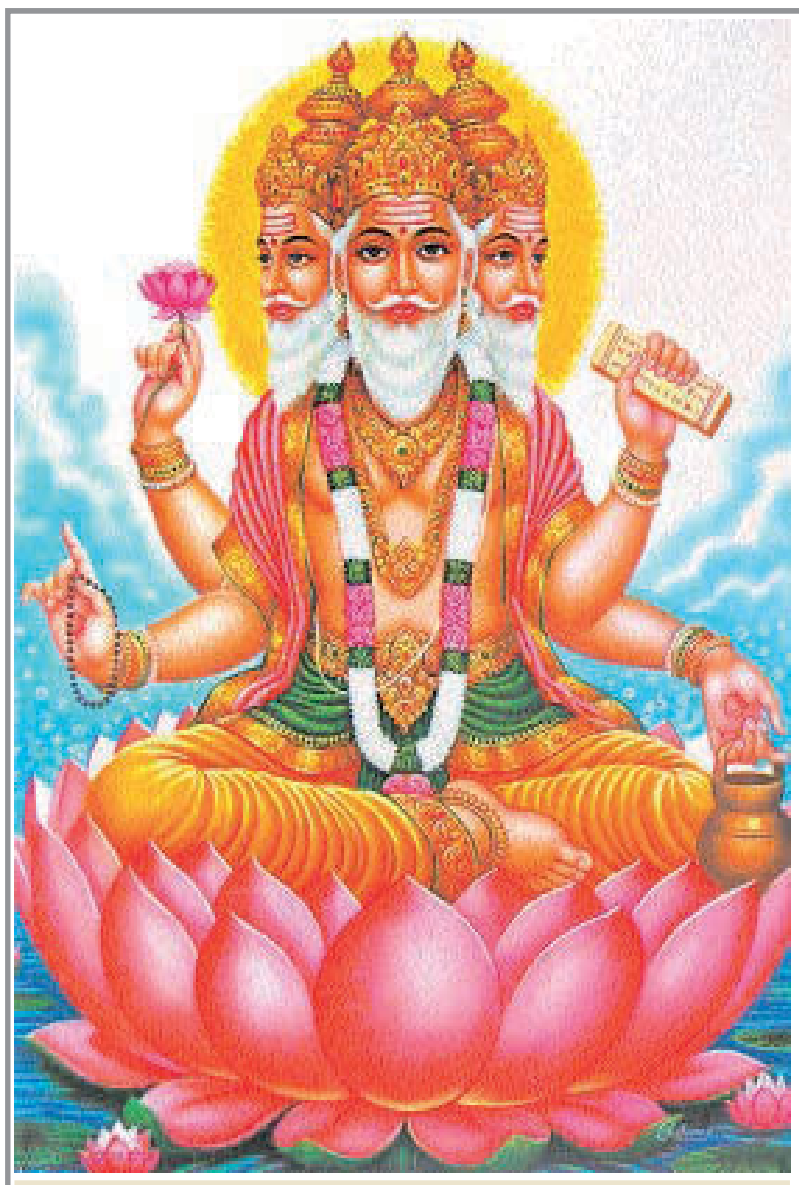

ब्रह्मा की उपासना से लंबी आयु, आध्यात्मिक उन्नति तथा समस्त प्रकार के संसारिक ऐश्वर्यों की प्राप्ति होती है। ब्रह्मा प्रसन्न होने पर व्यक्ति के जीवन का विकास करते हैं। अनेक देवताओं, दानवों तथा मानवों ने ब्रह्म अराधना करके मनुवांछित वरदान प्राप्त किए।

चराचर जगत के सृजनकर्ता ब्रह्माजी हैं। सृष्टि का कार्य भार प्रमुख रूप से त्रिदेवों द्वारा संचालित किया जाता है। इनमें ब्रह्माजी उत्पति, विष्णु जी पालन-पोषण तथा शिवजी संहार के देवता हैं। सर्वश्रेष्ठ पौराणिक कथाओं में ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव की महिमा का गुणगान बार-बार किया गया है। इनमें भी ब्रह्मा का नाम सबसे पहले आता है। वे विश्व के आद्य सृष्टा, प्रजापति, पितामह तथा हिरण्यगर्भ हैं। पुराणों में ब्रह्मजी का जो रूप वर्णित है, वह वैदिक प्रजापति के रूप का विकास है। प्रजापति की समस्त वैदिक गाथाएं ब्रह्मा पर आरोपित कर ली गई हैं। प्रजापति और उनकी दोहिता की कथा पुराणों में ब्रह्मा और सरस्वती के रूप में वर्णित हुई। विष्णु पुराण के अनुसार ब्रह्मा की उत्पति क्षीर सागर में शेषशायी विष्णु भगावान के नाभि कमल से हुई। इसलिए वह स्वयंभू कहलाते हैं। तपस्या के पश्चात इन्होंने ब्राह्मण्ड की रचना की थी। वास्तव में सृजन ही ब्रह्म का मुख्य कार्य है।

ब्राह्म पुराणों में ब्रह्मा का स्वरूप विष्णु के सदृश ही निरूपित किया गया है। वह ज्ञानस्वरूप, परमेश्वर अज, महान तथा सम्पूर्ण प्राणियों के जन्मदाता और अंतरात्मा बतलाए गए हैं। कार्य, कारण और चल-अचल सभी इनके अंतर्गत हैं। समस्त कला और विद्या इन्होंने ही प्रकट कीं। यह त्रिगुणात्मिक माया से अतीत ब्रह्म हैं तथा सारा ब्राह्मण्ड इन्हीं से निकला है। मार्कण्डेय पुराण के मधु कैटभ वध प्रसंग में विष्णु का उत्कर्ष और ब्रह्मा की विपन्नता दिखाई गई है। ब्रह्मा की प्रजापति मूर्ति के निर्माण का वर्णन मत्स्य पुराण में पाया जाता है।

स्वयंभू ब्रह्म- महाप्रलय के पश्चात भगवान नारायण दीर्घ काल तक योगनिद्रा में रहे। योगनिद्रा से जागने के बाद उनकी नाभि से एक दिव्य कमल प्रकट हुआ। जिसकी कणिकाओं पर स्वयंभू ब्रह्मा प्रकट हुए। उन्होंने अपने नेत्रों को चारों और घुमाकर शून्य में देखा। इस चेष्ठा से चारों दिशाओं में उनके चार मुख प्रकट हो गए। जब चारों और देखने से उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं दिया, तब उन्होंने सोचा इस कमल पर बैठा हुआ मैं कौन हूं? मैं कहां से आया हूं तथा यह कमल कहां से निकला है। दीर्घकाल तक तप करने के पश्चात ब्रह्माजी को शेष शैय्या पर सोए हुए भगवान विष्णु के दर्शन हुए। अपने एवं विश्व के कारण परम पुरूष का दर्शन करके उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने भगवान विष्णु की स्तुति की। भगवान विष्णु ने ब्रह्माजी से कहा कि अब आप तप शक्ति से सम्पन्न हो गए हैं और आपको मेरा अनुग्रह भी प्राप्त हो गया है। अत: आप सृष्टि का निर्माण कीजिए।

भगवान विष्णु की प्रेरणा से सरस्वती में सृष्टि प्रक्रिया में सर्वप्रथम ब्रह्मा जी के प्रकट होने का वर्णन मिलता है। वह मानसिक संकल्प से प्रजापतियों को उत्पन्न कर उनके द्वारा सम्पूर्ण प्रजा की सृष्टि करते हैं। इसलिए वे प्रजापतियों के भी पति कहे जाते है। मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलसत्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ, दक्ष तथा कर्दम ये दस मुख्य प्रजापति ब्रह्म जी से उत्पन्न हुए हैं। भगवतादि पुराणों के अनुसार भगवान रूद्र भी ब्रह्माजी के ललाट से उत्पन्न हुए। मानव सृष्टि के मूल महाराज मनु उनके दक्षिण भाग से तथा वाम भाग से शतरूपा की उत्पत्ति हुई। स्वयाम्भुव मनु और महारानी शतरूपा से मैथुनी शतरूपा और इनसे मैथुनी सृष्टि प्रारंभ हुई।

पितामह ब्रह्मा- सभी देवता ब्रह्मा जी के पुत्र हैं। अत: वह पितामह के नाम से भी जाने जाते हैं। यूं तो ब्रह्मा जी देवता, दानव, तथा सभी जीवों के पितामह हैं। फिर भी वह विशेष रूप से धर्म के पक्षपाती हैं। इसलिए जब देवासुरादि संग्रामों में पराजित होकर देवता ब्रह्मा जी के पास आते हैं, तो ब्रह्मा जी धर्म की स्थापना के लिए भगवान विष्णु को परित करते हैं। अत: भगवान विष्णु के प्राय: चौबीस अवतारों में यही निमित्त बनते हैं। शैव और शाक्त आगमों की भांति ब्रह्माजी की उपासना का भी एक विशिष्ट संप्रदाय है, जो वैखानस सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध है। इस वैखानस की सभी सम्प्रदायों में मान्यता है। पुराणादि सभी शास्त्रों के यही आदि वक्ता माने गए हैं। ब्रह्माजी की प्राय: अर्मूत उपासना ही होती है। सर्वतोभद्र, लिंगतोभद्र आदि चक्रों में उनकी पूजा मुख्य रूप से होती है। किन्तु मूर्तरूप में मन्दिरों में उनकी पूजा पुष्कर क्षेत्र तथा ब्रह्मवर्त क्षेत्र (बिठुर) में होती है। माध्य सम्प्रदाय के आदि आचार्य ब्रह्माजी ही माने जाते हैं। इसलिए उड़यी आदि मुख्य मध्यपीणें में इनकी पूजा-आराधना की विशेष परंपरा है। देवताओं और असुरों में इनकी पूजा व्यापक रूप से होती है। विप्रचिति, तारक, हिरण्यक्षिप, रावण गजासुर, तथा त्रिपुर आदि असुरों की तपस्या में प्राय: सबसे अधिक आराधना ब्रह्मजी की होती थी। देवता, ऋषि मुनि, गन्धर्व, किन्नर तथा विद्याघर गण इनकी आराधना में निरन्तर तत्पर रहते हैं।

ब्रह्माजी का स्वरूप- मस्तय पुराण के अनुसार ब्रह्माजी के चार मुख्य हैं। वह अपने चारों हाथों में क्रमश: वरमुद्रा, अक्षरसूत्र, वेद तथा कमण्डल धारण किए हैं। वह कमल प्रस्य पर विराजते हैं। उनके वस्त्र सफेद रंग के हैं। उनका प्रिय वाहन हंस है। पुराणों के अनुसार ब्रह्माजी ने स्वयं प्रकट होने के पश्चात अपने मानस पुत्रों को प्रकट किया। मन से मारिचि, नेत्र से अग्नि, मुख से अंगीरस, कान से पुलस्त्य, नाभि से प्रलह, हात से कृतु, त्वचा से भृगु, प्राण से वशिष्ठ, अंगुषठ से दक्ष, छाया से कर्दम, गोद से नारद, इच्छा से सनक, सनन्दन, सनातन, सनत कुमार, शरीर से स्वायंभुव मनु, ध्यान से चित्रगुप्त आदि प्रकट हुए। 'पुराणों में ब्रह्मपुत्रों को ब्रह्म आत्मा वे जायते पुत्र' ही कहा गया है।

ब्रह्मा पूजन से लाभ- ब्रह्मजी सत्वगुणी हैं। परमार्थ की राह पर चलने वालों पर शीघ्र प्रसन्न होते हैं। ब्रह्म की उपासना से लंबी आयु, आध्यात्मिक उन्नति, तथा समस्त प्रकार के संसारिक ऐश्वर्यों की प्राप्ति होती है।